यथार्थ और द्वंद्व से कतराती पाठ्यपुस्तकें

योगेन्द्र दाधीच एवं सुधीर सिंह

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 (एनसीएफ 2005) पर 'आधारित' राजस्थान की सामाजिक विज्ञान की कक्षा 6 एवं 7 की नई पाठ्यपुस्तकें इस पाठ्यचर्या के आने के आठ साल बाद अन्ततः बच्चों के हाथ में होंगी। उम्मीद की जा रही थी कि यह पाठ्यपुस्तकें एनसीएफ 2005 और राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एनसीईआरटी) द्वारा विकसित नई पाठ्यपुस्तकों के आलोक में बेहतरी की ओर बढ़ेंगी और सामाजिक विज्ञान सीखने का ज्यादा बेहतर परिप्रेक्ष्य उपलब्ध करवाएंगी। एनसीईआरटी द्वारा विकसित पाठ्यपुस्तकों के नजदीक पहुंचना तो दूर यह पाठ्यपुस्तकें अपनी पहले की जगह से बहुत थोड़ा ही आगे सरक पाई हैं। इन पाठ्यपुस्तकों को राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, शिक्षा विभाग एवं आईसीआईसीआई फाउण्डेशन ने विकसित किया है। इन पाठ्यपुस्तकों के निर्माण से पहले पाठ्यचर्या नहीं बनाई गई है और जिस पाठ्यक्रम को आधार बनाया गया है वह भी अभी ड्राफ्ट ही है। इन पाठ्यपुस्तकों को देखकर लगता है कि राष्ट्रीय स्तर पर चले सघन शैक्षिक विमर्श से यह अछूती रही हैं।

सामाजिक विज्ञान की पुरानी पाठ्यपुस्तकों की समीक्षा करते हुए ड्राफ्ट पाठ्यक्रम में कहा गया है, ''एनसीएफ 2005 से पहले राजस्थान का पाठ्यक्रम अनुशासनात्मक दृष्टिकोण को सुझाता दिखाई दे रहा था जिसके चलते राजस्थान में चल रही सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकें अनुशासनात्मक दृष्टिकोण का पालन कर रही थीं। हालांकि सामाजिक विज्ञान के तीनों विषयों (भूगोल, इतिहास एवं नागरिक शास्त्र) को एक ही पुस्तक में रखा गया था, परन्तु वे अलग-अलग हिस्सों में प्रस्तुत किए गए जिनका आपस में कोई संबंध बनता हुआ दिखाई नहीं देता था। यह पुस्तकें सूचना से भरी हुई एवं बच्चों के संदर्भ से दूर थीं। लिंग समता के आधार पर देखने पर यह पाया गया कि इसमें सुझावित अधिकांश गतिविधियां पुरुष केन्द्रित थीं।'' आगे यह दस्तावेज कहता है, ''पुरानी पुस्तकों की सभी कमियों को दूर करने के साथ-साथ एनसीएफ 2005 में दिए गए सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए राजस्थान में सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम को राजस्थान के भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों में विकसित करने का प्रयास किया गया है।''

योगेन्द्र दाधीच

पिछले करीब तीन साल से दिगन्तर, जयपुर में बतौर असिस्टेंट फैलो कार्यरत हैं।

सुधीर सिंह

लगभग डेढ़ दशक से शिक्षा के क्षेत्र में कार्य और वर्तमान में दिगन्तर, जयपुर में बतौर एसोशिएट फैलो कार्यरत हैं।

उपरोक्त समीक्षा यह भ्रम पैदा कर सकती है कि यह पाठ्यपुस्तकें एनसीएफ 2005 के सिद्धान्तों पर आधारित हैं जिसमें कि ज्ञान और जानकारी में फर्क करना, ज्ञान को बाहरी दुनिया से जोड़ना, ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में बच्चों की भागीदारी, अंतःअनुशासनात्मक दृष्टिकोण, संवैधानिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता आदि सिद्धान्तों पर जोर दिया गया है। इस समीक्षा में हम समझने का प्रयास करेंगे कि यह पाठ्यपुस्तकें अपने ही ड्राफ्ट पाठ्यक्रम के दावों और एनसीएफ 2005 की कसौटी पर कितना खरी उतरती हैं।

सूचनाओं का अंतहीन सिलसिला

सामाजिक विज्ञान के बारे में आम धारणा है कि इसमें सूचनाओं के रटने पर जोर दिया जाता है। एनसीएफ 2005 कहता है, ''ऐसा माना जाता है कि सामाजिक विज्ञान में केवल सूचनाएं दी जाती हैं और वे पाठ केन्द्रित होती हैं। इसलिए विषयवस्तु में परीक्षा के लिए तथ्यों का अंबार लगाए जाने की बजाय उसकी संज्ञानात्मक समझ विकसित किए जाने की आवश्यकता है।'' ऐसे में सामजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों की यह जिम्मेदारी है कि वह बच्चे में समाजवादी, पंथनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक समाज के निर्माण की जरूरत और संवैधानिक मूल्यों जिसमें- न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारा, एकता के महत्त्व को समझाएं ताकि वे समाज के सक्रिय, जिम्मेदार और चिंतनशील सदस्य के रूप में विकसित हो सकें।

एनसीएफ 2005 से खाद-पानी लेने के दावे के बावजूद दोनों ही पाठ्यपुस्तकें सूचनाओं का मायाजाल बुनती हैं। इन पाठ्यपुस्तकों में फौजदारी, दीवानी, नृजातियता, पुरातत्ववेत्ता, विविधता, सरकार आदि अनेक जटिल अवधारणाएं हैं जिनको समझाने के बजाय सूचना की तरह आरोपित कर दिया गया है। पंचायती राज पर यह विमर्श देखिए, ''गांव के विकास के लिए क्या होना चाहिए, इसकी जानकारी सबसे अधिक गांव वालों को ही होती है। अतः यह उचित ही है कि ग्रामीण विकास का नियोजन और उसकी क्रियान्वयन की जिम्मेदारी भी ग्रामवासियों को ही दे दी जाए। पंचायतीराज व्यवस्था इसी लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का प्रभावी उपाय है।'' (कक्षा 6, पृ. 90) संभवतः पाठ्यपुस्तक निर्माता यह मान लेते हैं कि 'पंचायती राज', 'लोकतंत्र', 'विकेन्द्रीकरण' आदि सरल अवधारणाएं हैं जिन्हें कक्षा छह के बच्चे इतना लिख देने भर से समझ लेंगे। इसी अवधारणा पर एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक एक केस स्टडी के माध्यम से इस नतीजे तक पहुंचती है, ''संविधान में दिए हुए निर्देशों के आधार पर देश के हर राज्य ने पंचायत से जुड़े कानून बनाए हैं। इसलिए पंचायत संबंधी कानून हर राज्य में कुछ अलग-अलग हो सकते हैं। इसके पीछे मुख्य विचार यह है कि अपने गांव की व्यवस्था में लोगों की भागीदारी बढ़े और उन्हें अपनी आवाज उठाने के लिए ज्यादा से ज्यादा मौके मिलें।'' (हमारा सामाजिक-राजनैतिक जीवन, कक्षा 6, पृ. 54) यहां बगैर भारी-भरकम शब्दों के अंबार लगाए संवैधानिक मूल्यों और लोकतंत्र में जनता के अधिकार की बात करते हुए पंचायती राज के उत्तरोत्तर विकास की ओर इशारा किया गया है जबकि राजस्थान की पाठ्यपुस्तक में यह एक बोझिल सूचना की तरह दिया गया है।

इतिहास में कुछ मूल अवधारणाएं होती हैं जैसे इतिहास, इतिहासकार, पुरातत्ववेत्ता, अभिलेख, सभ्यता, ईस्वी पूर्व आदि। इतिहास की सही समझ बनाने के लिए यह बुनियादी अवधारणाएं हैं। परन्तु राजस्थान की पाठ्यपुस्तकों में इन्हें सपाट कथनों से समझाया गया है, ''बीते हुए कल के बारे में जानने की कोशिश को ही इतिहास कहते हैं।'' (कक्षा 6, पृ. 116) यह पाठ्यपुस्तकें बच्चे के मन में इतिहास के प्रति कोई जिज्ञासा नहीं जगातीं। हड़प्पा संस्कृति को समझाने का तरीका देखिए, ''जहां एक तरफ मेसोपोटामिया की सभ्यता बढ़ रही थी, वहीं दक्षिण एशिया में भी एक शहरी सभ्यता उभरती दिखाई देती है। इस सभ्यता को कई नामों से जाना जाता है। सन् 1922 में सबसे पहले इसके बारे में हड़प्पा नाम की जगह पर एक टीले पर खुदाई करने से दक्षिण एशियाई सभ्यता के बारे में पता चला, तो पहले इसका नाम हड़प्पा की सभ्यता रख दिया गया। हड़प्पा से 400 किलोमीटर दूर मोअन जो दड़ो नाम की जगह पर वैज्ञानिकों को एक भरे-पूरे शहर के अवशेष मिले। तो इसे मोअन जो दड़ो की सभ्यता कहा जाने लगा।'' (कक्षा 6, पृ. 126)

जबकि एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक 'हड़प्पा की कहानी' को ऐसे समझाती है, ''अक्सर पुरानी इमारत अपनी कहानी बताती है। लगभग 150 साल पहले जब पंजाब में पहली बार रेलवे लाइनें बिछाई जा रही थीं, तो इस काम में जुटे इंजीनियरों को अचानक हड़प्पा पुरास्थल मिला, जो आधुनिक पाकिस्तान में है। उन्होंने सोचा कि यह एक ऐसा खंडहर है, जहां से अच्छी ईंटें मिलेंगी। यह सोचकर वे हड़प्पा के खंड़हरों से हजारों ईंटें उखाड़ ले गए जिससे उन्होंने रेलवे लाइनें बिछाईं। इससे कई इमारतें पूरी तरह नष्ट हो गईं। उसके बाद पुरातत्वविदों ने इस स्थल को ढूंढ़ा और तब पता चला कि यह खंडहर उपमहाद्वीप के सबसे पुराने शहरों में से एक है। चूंकि इस नगर की खोज सबसे पहले हुई थी, इसलिए बाद में मिलने वाले इस तरह के सभी पुरास्थलों में जो इमारतें और चीजें मिलीं उन्हें हड़प्पा सभ्यता की इमारतें कहा गया। इन शहरों का निर्माण लगभग 4700 साल पहले हुआ था।'' (हमारे अतीत, भाग एक, कक्षा 6 पृ. 32) आगे हड़प्पा नगर की विशेषता, भवन, नाले और सड़क, वहां का जीवन और शिल्प आदि विषयों पर विस्तार से बातचीत की गई है। यहां हड़प्पा में विकसित हुई सभ्यता और उसके नष्ट होने के संभावित कारणों को बिना बोझिल बनाए सहजता से चर्चा की गई है। पाठ्यपुस्तक में इससे पूर्व के पाठों में पुरातत्वविद, इतिहास, ईस्वी पूर्व, ईस्वी, पुरास्थल जैसी अवधारणाओं को भी समझाया गया है। एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक में अवधारणाओं की स्पष्टता के साथ-साथ बच्चों को भागीदारी के अवसर भी हैं जो इतिहास के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं और जो आगे इतिहास की बुनियादी अवधारणाओं के बेहतर विकास में सहायक हो सकता है।

सूचनाओं का यही अंतहीन सिलसिला भूगोल में भी जारी है। जैसे, ''पृथ्वी अपने अक्ष पर 23.5 डिग्री के कोण पर झुकी हुई है। इस झुकी हुई अवस्था में ही यह सूर्य के चारों ओर अपनी कक्षा में परिक्रमा करती है। उत्तरी व दक्षिणी गोलार्द्धों में ऋतुओं का चक्र सूर्य की परिक्रमा पर आधारित है।'' (कक्षा 6, पृ. 27) यह स्वाभाविक सवाल है कि पृथ्वी किसके सापेक्ष झुकी हुई है और इसका ऋतु परिवर्तन से क्या संबंध है? क्या संपूर्ण पृथ्वी पर ऋतुएं बदलती हैं या उनमें किसी तरह का कोई फर्क होता है; इसका जवाब यह पाठ्यपुस्तक नहीं देती।

इन पाठ्यपुस्तकों में अनेक उदाहरण हैं जिनमें बजाय बच्चे की समझ विकसित करने के अवधारणाओं को सूचना की तरह परोस दिया गया है। इससे रटन्त विद्या को ही बढ़ावा मिलेगा और बच्चे सूचनाओं के बोझ तले दबे रहेंगे। सूचना के बोझ के कुछ उदाहरण देखिए, ''भूमध्य रेखा से उत्तर या दक्षिण में स्थित किसी स्थान की कोणीय स्थिति अक्षांश कहलाती है।'' (कक्षा 6, पृ. 26) ''पर्वतों की एक खासियत यह भी है कि इनकी जलवायु आस-पास के इलाकों से ठंडी होती है क्योंकि ऊंचाई के साथ-साथ तापमान गिरता है। पर्वत वर्षा को भी प्रभावित करते हैं। पर्वतों के जिस तरफ बादल वर्षा करते हैं, उसे पवनमुखी भाग कहते है क्योंकि उसका मुख पवन के सामने होता है। वहीं दूसरी तरफ के भाग को पवनविमुखी भाग कहते हैं।'' (कक्षा 7, पृ. 5)

राजस्थान की इन पाठ्यपुस्तकों में किसी भी विषय की मूल अवधारणाओं को जो कि आगे ज्ञान निर्माण में सहायक होंगी उन्हें सूचना की तरह परोस दिया गया है।

ज्ञान सृजन में परनिर्भरता

ज्ञान सृजन में आत्मनिर्भरता के लिए जरूरी है कि बच्चे स्वयं अवलोकन करें, कुछ करके देखें, आपस में चर्चा करें, लघु सर्वे करें और नतीजे निकालें, केस स्टडी का अध्ययन करें, काल्पनिक वार्ताएं करें, किसी पेशे को सम्पन्न होते हुए देखें, ऐतिहासिक स्थलों को देखें आदि-आदि। इस तरह की गतिविधियों के माध्यम से सामाजिक विज्ञान की अवधारणाओं के बारे में समालोचनात्मक समझ विकसित करने के अवसर दिए जा सकते हैं। बच्चों की यही सक्रिय सहभागिता उन्हें ज्ञान निर्माण में आत्मनिर्भर बना सकती है। लेकिन इन पाठ्यपुस्तकों के अधिकांश पाठ स्कूल से बाहर जाकर बातचीत/सर्वे करने, ऐतिहासिक स्थलों का अवलोकन या चीजों को संपन्न होते हुए देखने के अवसर नहीं देते। न ही पाठ से पहले किसी केस स्टडी या काल्पनिक वार्ता के माध्यम से कोई ऐसा संदर्भ निर्मित करते हैं जो बच्चे को सवाल करने हेतु तैयार कर सकें। इन पाठ्यपुस्तकों के पाठों का आरंभ बनावटी तरीके से होता है। एक

पात्र के रूप में बच्चा/बच्ची दूसरे पात्र यानी शिक्षक/दादा/पापा से ऐसे सवाल पूछते हैं, ''जिया को नियमित रूप से समाचार पत्र पढ़ने की आदत थी। एक दिन उसने समाचार पत्र में पढ़ा कि राजस्थान के एक गांव में उच्च शिक्षा प्राप्त महिला ने सरपंच पद के लिए कई सराहनीय कार्य किए हैं। ...उसने अपने पिताजी से पूछा कि गांवों की बेहतरी में सरपंच का क्या योगदान होता है?'' (कक्षा 6, पृ. 89) इस पाठ में जिया का बस इतना ही योगदान है। उसके बाद जिया गायब हो जाती है और सारे निष्कर्ष (ज्ञान) पाठ्यपुस्तक निर्माता समूह ने दिए हैं। जिया के लिए न तो कोई गतिविधि है, न ही समुदाय/गांव/ढाणी में जाकर जानकारी एकत्रित करने के अवसर हैं। कक्षा 6 में पाठ 8, 9, 12, 13, 14 और कक्षा 7 के पाठ 12, 13 में आपको ऐसे ही पात्र मिलेंगे। किसी पाठ में पहले पात्र के तौर पर नेहा कुछ सवाल पूछकर गायब हो जाती है तो किसी पाठ में यह कार्य रहीम या झुमकी के द्वारा करवाया जाता है। शेष पाठ कुछ इस तरह से चलते हैं, ''बच्चो, आधुनिक युग को सूचना का युग कहा जाता है। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि जिसके पास सूचना है वह शक्तिशाली है।'' (कक्षा 7, पृ. 99) मजेदार बात यह है कि एनसीएफ 2005 के आलोक में बनी होने का दावा करने वाली यह किताबें उपरोक्त कथन में बच्चों के सम्मुख सूचना और ज्ञान के फर्क को मिटाते हुए सूचना को ही ज्ञान के रूप में परोस देती हैं।

इन पाठ्यपुस्तकों में कोई विचारोत्तेजक सवाल भी नहीं हैं जो बच्चों को सोचने के लिए प्रोत्साहित करें। परिभाषाएं अवश्य हैं, ''अगर हम एक जंगल को देखें तो पाएंगे कि कैसे पौधे जो सूर्य की ऊर्जा से भोजन बनाते हैं उन्हें हिरण या खरगोश खाते हैं। ...जिसे खाद्य जाल कहते हैं।'' (कक्षा 7, 99) पाठ के बीच-बीच में शीर्षक हैं 'आओ करके देखें', यह उम्मीद जगाता है कि इसमें बच्चों के करने के लिए कोई गतिविधि अवश्य होगी परन्तु वहां भी सवाल ही मिलते हैं। जैसे, ''अलाउद्दीन खिलजी ने घोड़ों को दागने एवं सैनिकों का हुलिया रखने का चलन क्यों शुरू किया होगा? चर्चा कीजिए।'' (कक्षा 7, पृ. 141) या ''आपके क्षेत्र में जिला उपभोक्ता मंच कहां स्थित है? शिकायत दर्ज करने की प्रक्रिया के बारे में पता कीजिए।'' (कक्षा 7, पृ. 120)

'शिक्षकों के लिए' पृष्ठ में लिखा है, ''किसी भी बिन्दु पर तात्कालिक अभिमत व निर्णय देने की बजाय विद्यार्थी को स्वयं सोचने एवं निष्कर्ष तक पहुंचने के अवसर प्रदान करें।'' (कक्षा 6, पृ. ix) यह पाठ्यपुस्तकें 'अज्ञात से ज्ञात' के जिस शिक्षणशास्त्र को काम में लेती हैं और बच्चे को ज्ञान भरने के लिए एक खाली बर्तन से अधिक नहीं समझतीं। यह बच्चे को मात्र ज्ञान का ग्रहणकर्ता ही समझकर अपने ज्ञान की रचना करती हैं। ऐसे में बच्चों का ज्ञान निर्माण में आत्मनिर्भर बनना एक सपना ही है।

पाठ्यपुस्तक के आमुख तथा शिक्षकों के लिए पृष्ठ में लिखा है कि मूल्यांकन सीखने-सिखाने का ही हिस्सा है तथा सीखने की प्रक्रिया में मददगार है। इसलिए अभ्यास प्रश्नों का हल विद्यार्थी रटन्त विधा से न ढूंढ़ें बल्कि तार्किक रूप से चर्चा कर निष्कर्ष तक पहुंचें। अभ्यास प्रश्नों के विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि यह अपने इस दावे पर कितना खरा उतरती हैं।

कक्षा 6 एवं 7 की सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में कुल 336 सवाल हैं। इनमें से 174 यानी 52 फीसदी सवाल सूचनात्मक हैं और करीब 40 फीसदी यानी 135 सवाल विवरणात्मक हैं। सिर्फ 8 फीसदी यानी 27 ही सवाल ऐसे हैं जो बच्चों को थोड़ा विश्लेषण का अवसर देते हैं। सवालों के कुछ उदाहरण स्थिति समझने में मदद करेंगे, 'मगध के प्रमुख शासकों के नाम लिखिए (कक्षा 6, पृ. 148), 'रेशम कहां से मंगाया जाता था?' (कक्षा 7, पृ. 131), 'आगरा नगर की स्थापना किस शासक ने की?' (वही, पृ. 147)। विवरणात्मक में ऐसे सवाल हैं जिनके जवाब में पाठ से पूरा अनुच्छेद या कुछ पंक्तियां लिख देने से काम चल जाएगा। जैसे, 'वीरगल से क्या तात्पर्य है?' (वही, पृ. 137), 'प्रत्यक्ष लोकतंत्र से आप क्या समझते हैं?' (कक्षा 6, पृ. 88), 'सरकार के विभिन्न रूपों का वर्णन कीजिए।' (वही, पृ. 81) पाठ्यपुस्तक में दिए गए इन सवालों से भी जाहिर होता है कि इनमें बच्चे के स्थानीय ज्ञान को विचार विमर्श का हिस्सा नहीं बनाया गया है। यह पाठ्यपुस्तकें ऐसे किन्हीं मुद्दों को उठाने से डरती हैं जो यथास्थिति को

चुनौती देते हों और बच्चों को आलोचनात्मक चिन्तन के अवसर देते हों। इनमें एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों से विकसित नई समझ का भी उपयोग नहीं किया गया है। एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकें आलोचनात्मक सवाल पूछने से नहीं कतरातीं। इसके कुछ उदाहरण एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तक में हैं, ''क्या हरमीत और सोनाली का यह कहना सही था कि हरमीत की मां काम नहीं करती? आप क्या सोचते हैं? अगर आपकी मां या वे लोग, जो घर के काम में लगे हैं, एक दिन के लिए हड़ताल पर चले जाएं तो क्या होगा?'', ''मानचित्र 1 अथवा 2 की तुलना उपमहाद्वीप के आज के मानचित्र से करें। तुलना करते हुए दोनों के बीच जितनी समानताएं या असमानताएं मिलती हैं, उनकी सूची बनाइए।''

यह पाठ्यपुस्तकें सतत और समग्र मूल्यांकन का दावा तो करती हैं लेकिन उस पर खरा नहीं उतरतीं और परीक्षा के दुष्चक्र को नई शब्दावली के साथ जारी रखेंगी।

अवधारणात्मक गड़बड़ियां

इन पाठ्यपुस्तकों में अनेक अवधारणात्मक गड़बड़ियों के उदाहरण भी हैं। जैसे, पृथ्वी के अक्ष को कील के रूप में बताया गया है, ''...ग्लोब अपने स्टैंड पर कील द्वारा झुका हुआ है। इस कील को अक्ष कहते हैं।'' (कक्षा 6, पृ. 23-24) यदि बच्चा शिक्षक से पूछे कि क्या धरती भी इसी तरह की किसी कील पर झुकी है, तो क्या जवाब होगा? भूमिगत जल के बारे में बताया गया है कि, ''...यही भूमिगत जल कुओं और नलकूपों में एकत्रित होता है जिसे हम मशीनों द्वारा पुनः धरातल पर लाकर सिंचाई एवं दैनिक उपयोग में लेते है।'' (कक्षा 7, पृ. 25) आम आदमी भी जानता है कि जल तो भूमि के नीचे एकत्रित होता है न कि कुओं और नलकूपों में। कुओं अथवा नलकूपों का निर्माण करके तो जल को बाहर निकाला जाता है। ऐसा न लगे कि गिने-चुने उदाहरणों से ही यह सिद्ध कर रहे हैं कि पाठ्यपुस्तक में अवधारणाओं की गड़बड़ है इसलिए कुछ उदाहरण और देखिए, ''ऐसा विशाल स्थलखंड जिसके चारों ओर विस्तृत महासागर स्थित हो, उसे महाद्वीप कहा जाता है।'' (कक्षा 6, पृ. 41) ''पृथ्वी पर जल का बूंदों के रूप में गिरना वर्षा कहलाता है।'' (कक्षा 7, पृ. 16), ''प्राकृतिक शुद्ध जल में अवांछित तत्व मिल जाते हैं तो वह जल पीने एवं मानवीय उपयोग के लिए अनुपयुक्त हो जाता है। इसे जल प्रदूषण कहते हैं।'' (वही, पृ. 26) सवाल यह है कि पृथ्वी पर बूंदों के रूप में तो ओस भी गिरती है, क्या आप उसे वर्षा कहेंगे? क्या शुद्ध जल और पीने लायक जल में कोई फर्क नहीं है? शुद्ध जल, जिसे विज्ञान में H_2O कहते हैं सामान्यतया पीने के काम नहीं आता। इन अवधारणात्मक गड़बड़ियों को देखकर क्या अनुमान लगाया जाए? क्या पुस्तक निर्माण के प्रति निर्माता गंभीर नहीं थे या यह उनके ज्ञान की सीमा उजागर करता है?

भाषायी दुरूहता

पाठ्यपुस्तक में ऐसे संदर्भ/वाक्य/शब्द हैं जो कक्षा 6 और 7 के बच्चों के लिए अमूर्त हैं लेकिन इन्हें पाठ्यपुस्तक में कहीं भी समझाया नहीं गया है। पाठ्यपुस्तकों में ऐसे अनेक संदर्भ हैं जिनकी शुरुआत ही पंडिताऊ भाषा से होती है। उदाहरण के लिए, ''प्राचीन काल में खगोलीय खोज व अवलोकन की विधा का चरमोत्कर्ष मिश्र के पिरामिड़ों द्वारा 2500 ई.पू. से भी पहले स्थापित हुआ है।'' (कक्षा 6, पृ. 14) या फिर ''...पृथ्वी की आकृति गोलाकार है। उपग्रहों से ली गई तस्वीरों में पृथ्वी गोलाकार दिखाई देती है। पृथ्वी के मापन से पता चलता है कि पृथ्वी दोनों ध्रुवों पर कुछ दबी हुई है तथा विषुवत् वृत्त पर कुछ उभरी हुई है।'' (कक्षा 6, पृ. 8) या ''विधायिका का गठन एकसदनात्मक या द्विसदनात्मक हो सकता है।'' (कक्षा 7, पृ. 85) यह सूचना की तरह परोसे गए वाक्य बच्चों के लिए क्या अर्थ निर्मित करेंगे जबकि पूरे संदर्भ में इन अवधारणाओं को न तो यहां और न ही कक्षा पांच में समझाया गया है जबकि एनसीएफ 2005 के सिद्धान्तों पर पाठ्यपुस्तक निर्माण के दावों के बावजूद यह पाठ्यपुस्तकें समझकर सीखने के बजाय रटन्त या सूचनाएं परोसती दिखाई देती हैं। ऐसे अनेक शब्द हैं जिनका प्रयोग पहली बार किया गया है और जो बच्चे के परिवेश के भी नहीं हैं परन्तु यह पाठ्यपुस्तकें इनके अर्थ नहीं समझातीं। जैसे, अधिवास, भूमि

अवनयन, भू-निम्नीकरण, मृदा अपरदन, पारिस्थितिकी, व्यवस्थापिका, विघटन, अविभाज्य, अध्यादेश, धार्मिक सहिष्णुता, एकेश्वरवाद, निर्गुण भक्ति, परिक्रमण कक्ष आदि-आदि। यह सूची बहुत लम्बी बनाई जा सकती है।

गांव का रूमानी चित्रण

पाठ्यपुस्तक के कई पाठ हैं जिनमें गांवों की यर्थाथ से कटी रूमानी छवि का चित्रण किया गया है। 'हम और हमारे बाजार' में ऐसा ही वर्णन है, ''गांवों में तो हाट बाजार लगता है ...क्योंकि वहां कम आबादी होने से स्थाई दुकानें नहीं होती हैं।'' (कक्षा 7, पृ. 114) राजस्थान में ऐसे गांव बहुत कम ही होंगे जहां आजकल हाट बाजार लगते हों। हाट लगने की यह परंपरा राजस्थान के क्षेत्र विशेष को छोड़कर और कहीं देखने को नहीं मिलती। इस छवि को जांचने की जरूरत है। ऐसी ही आदर्श छवि पंचायती राज की पेश की गई है, ''बच्चो, अब आप भली-भांति समझ गए होंगे कि पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण जनों के लोकतंत्र में भागीदारी, क्षेत्र के संसाधनों के समुचित वितरण तथा सभी लोगों के लिए सम्मान के जीवन का प्रतीक है। यह व्यवस्था जनता के अपने शासन को लागू करने तथा समाज में समरसता उत्पन्न करने के लक्ष्य से कार्य करती है।'' (कक्षा 6, पृ. 96)। यह पाठ्यपुस्तकें हमारे यथार्थ को निर्द्वन्द्व रूप से पेश करते हुए आभासी संसार को पेश करती हैं। मानवीय विविधताएं, भेदभाव और असमानता, नगरीय स्वशासन, समाज और सरकार, जिला प्रशासन आदि पाठ इसके अन्य उदाहरण हैं।

विवेचनात्मक शिक्षणशास्त्र

''कक्षा में शिक्षक व शिक्षार्थी की अंतःक्रिया विवेचनात्मक होती है क्योंकि उसमें यह परिभाषित करने की ताकत होती है कि किसका ज्ञान स्कूल संबंधी ज्ञान का हिस्सा बनेगा और किसकी आवाज उसे आकार देगी।'' (एनसीएफ 2005, अध्याय 2, पृ. 26) आशय यह है कि कक्षा में शिक्षक की भूमिका को बदलते हुए बच्चे के सामने ऐसे मुद्दों या परिस्थितियों को रखा जाए जिन पर विमर्श करते हुए वह उनके संभावित हल भी सोच सकें। इसको बदलने का संकल्प ड्राफ्ट पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक के आमुख में है, ''शिक्षक की भूमिका उपदेशक की न होकर एक मार्गदर्शन व अधिगम सहायक की है।'' (कक्षा 6, पृ. VII-IX) परन्तु इन पाठ्यपुस्तकों में ऐसे कोई विवरण या निर्देश नहीं मिलते जिन्हें समझकर शिक्षक को यह पता चले कि वह किस तरह की गतिविधियां करवाए या सवाल पूछे ताकि वह बच्चों को अपने मत बनाने या मत की जांच करने के अवसर दे सके। यह परिस्थिति दो कारणों से और जटिल हो जाती है : एक, अधिकांश शिक्षकों की स्वयं की सामाजिक अध्ययन की बेहतर समझ नहीं होना क्योंकि वह भी कुछ इसी तरह की पाठ्यपुस्तकों और शिक्षकों से पढ़कर आया है। और दूसरा, उसके अपने सामाजिक-सांस्कृतिक पूर्वाग्रह भी हैं जो उसे समाज से मिले हैं। अतः पाठ्यपुस्तक की यह जिम्मेदारी है कि वह शिक्षक के लिए ऐसे स्थान बनाए और द्वंद्वात्मक मुद्दों को जगह दे। इसके स्थान पर यह पाठ्यपुस्तकें शिक्षक व छात्र के बीच बातचीत के बनावटी संदर्भ ही निर्मित करती हैं, "नेहा ने गुरुजी से कहा- 'गुरुजी, क्या मैं एक सवाल पूछ सकती हूं? गुरुजी ने मुस्कराकर कहा- 'हां बेटी, जरूर पूछो।' नेहा- 'गुरुजी, क्या दुनिया में कोई ऐसी जगह है जहां सभी लोग एक समान और एक जैसे हैं?' गुरुजी ने नेहा से पलट कर पूछा- 'तुम्हें अपने आस-पास की सारी दुनिया कैसी दिखाई देती है?'' (कक्षा 6, पृ. 60) इस संदर्भ में यह समझना मुश्किल है कि बच्चा क्या जवाब दे। शिक्षक ऐसी रहस्यमयी टिप्पणियां भी करता है, ''प्रकृति की विविधता को कोई नहीं जानता।'' अब यदि कोई नहीं जानता तो फिर अध्ययन-अध्यापन की बात क्यों कर रहे हैं?

पाठ्यपुस्तकों में गतिविधि के नाम पर अभ्यास प्रश्न हैं जिनमें बच्चों एवं शिक्षक के लिए कुछ करने की गुंजाइश नहीं है। जैसे, ''लोकतांत्रिक सरकार 'जनता की, जनता के द्वारा और जनता के लिए' होती है। यह वक्तव्य किसका था? उनके बारे में मुख्य जानकारियां एकत्रित कीजिए।'' (कक्षा 6, पृ. 82) अथवा ''ऊपर दिए गए चित्र के आधार पर बताइए- दुनिया में सबसे ज्यादा लोग किस धर्म में विश्वास करते हैं? कितने प्रतिशत हिन्दू धर्म में विश्वास करते हैं? इस्लाम को कितने प्रतिशत मानते हैं?'' (वही, पृ. 52) कहा जा सकता है कि यह पाठ्यपुस्तकें बच्चे को अपने ज्ञान के आधार पर कुछ करने का अवसर नहीं देतीं।

विवेचनात्मक शिक्षण में स्थानीय मुद्दों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। एनसीएफ 2005 की संस्तुति है कि, ''राष्ट्रीय दृष्टिकोण व स्थानीय दृष्टिकोण में संतुलन होना चाहिए।'' परन्तु इसके नाम पर इन पाठ्यपुस्तकों में महज खानापूर्ति की गई है। चाहे वह फिर भूगोल में 'मौसम, जलवायु, जल' आदि की बात हो या फिर सामाजिक-राजनैतिक जीवन में 'विविधता, असमानता, भेदभाव, जेंडर' की बात हो। इन सभी में स्थानीय दृष्टिकोण का स्थान नगण्य है। राजस्थान के स्थानीय संदर्भ के नाम पर सरकार की खूबियों या कामों का बखान है। राजस्थान में ऐसे प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल हैं जिन्हें भारत में ही नहीं पूरे विश्व में सराहा जाता है परन्तु उनका जिक्र भी इन पाठ्यपुस्तकों में बहुत ही चलाऊ है। स्थानीय ज्ञान को कक्षा में लाने की अपार संभावनाएं थीं परन्तु स्थानीय ज्ञान और समुदाय की भागीदारी पर भी यह पाठ्यपुस्तकें मौन हैं, न तो इसका जिक्र आमुख व शिक्षकों के पेज में किया गया है और न ही दोनों पाठ्यपुस्तकों में किसी गतिविधि या अवधारणाओं को स्थानीय संदर्भ में समझने के तौर पर किया गया है। सीखने में यह भी जरूरी होता है कि ज्ञात से अज्ञात की तरफ बढ़ा जाए परन्तु यह पाठ्यपुस्तकें अज्ञात से ही सिखाने की शुरुआत करती हैं और ज्ञात तक आते-आते दम तोड़ देती हैं।

इन पाठ्यपुस्तकों से विवेचनात्मक शिक्षणशास्त्र की उम्मीद करना तो बेकार है। विवेचनात्मक शिक्षणशास्त्र विभिन्न मुद्दों पर उनके सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व नैतिक पहलुओं के संदर्भ में स्थापित मान्यताओं को परखने और प्रश्नित करने के अवसर देता है। इसके लिए जरूरी है कि बच्चों के अनुभवों को कक्षा में स्थान दिया जाए और उन विवादास्पद मुद्दों को भी संबोधित किया जाए जो उनकी जिंदगी से जुड़े हैं। शिक्षक की भूमिका बच्चे से संवाद करने की बजाय सरकार के प्रचारक की लगती है, जो पाठ्यपुस्तक के माध्यम से सरकार द्वारा आरोपित योजनाओं को बच्चे को प्रेषित करता रहता है। इस संदर्भ में यह पाठ्यपुस्तकें प्रोफेसर कृष्ण कुमार (1998) की टिप्पणी को ही सही साबित करती हैं, ''पाठ्यपुस्तक उस सत्ता का प्रतीक है जिसके नीचे शिक्षक को काम करने को राजी होना जरूरी होता है...।''

ड्राफ्ट पाठ्यक्रम बच्चे में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं विश्लेषणात्मक कौशलों का विकास करने व अंतर्निर्भरता की तरफ बढ़ने एवं संवेदनशील बनाने को आवश्यक मानता है। परन्तु पाठ्यपुस्तकें इसके नजदीक भी नहीं पहुंचतीं। इन पाठ्यपुस्तकों ने अपना खोल तो बदला है लेकिन विधि और विषयवस्तु के स्तर पर कोई बदलाव नहीं दिखाई देता। पाठ्यपुस्तक में परिवार, मानचित्र, विविधता या सरकार की अवधारणा आदि पाठों में न केवल संस्कृति का पुनरूत्पादन है अपितु महिमामंडन भी है। जैसे, ''बच्चो, विविधता में एकता हमारे देश की विशेषता है जिसकी सराहना पूरी दुनिया में की जाती है।'' (कक्षा 6, पृ. 66)। सब जानते हैं कि विविधिता पूरी दुनिया में पाई जाती है। इस पर किसी देश को ज्यादा मंत्रमुग्ध होने की जरूरत नहीं है। पाठ्यपुस्तक में भाषाई विविधता, विविधता के नाम पर झगड़े, भाषायी, जातीय व भौगोलिक आधारों पर नए राज्यों के निर्माण की मांग, उत्तरी व दक्षिण भारतीयों का एक-दूसरे के प्रति खास दृष्टिकोण जैसे मुद्दे नहीं हैं, जिनको विमर्श में लाने से एक-दूसरे को समझने और संवदेनशीलता के विकास की संभावनाएं बढ़ सकती थीं।

असमानता को समझाने हेतु दक्षिण अफ्रीका का उदाहरण है, ''दक्षिण अफ्रीका में एक लम्बे समय तक वहां के मूल निवासियों के साथ गोरी सरकार ने अश्वेत रंग के आधार पर भेदभाव किया।'' (कक्षा 6, पृ. 69) क्या यह भेदभाव राजस्थान या भारत में नहीं है? फिर पाठ्यपुस्तक निर्माताओं ने अफ्रीका का संदर्भ क्यों लिया है? शायद यह अपने यथार्थ के द्वंद्व से बचने और उसे बदलने से कतराना है। अर्थात् ऐसा लगता है कि यह पाठ्यपुस्तकें विवाद से बचने के लिए स्थानीय मुद्दों को छूने से डरती हैं। इन पाठ्यपुस्तकों की पक्षधरता को अधिक गहराई से समझने की आवश्यकता है। कक्षा 6 की पाठ्यपुस्तक में यह तानाशाही पर एक विरोधाभाषी रवैया अख्तियार करती हैं। एक तरफ पाठ्यपुस्तक कहती है कि, ''यदि सरकार विभिन्न हितों के बीच टकरावों को बलपूर्वक दबाकर किसी हित को जर-जबरदस्ती से लागू करती है, तो इसे तानाशाही कहते हैं।'' दूसरी तरफ कहती हैं, ''यह तानाशाह भला हो सकता है या बहुत बुरा भी। यदि वह भला है तो प्रजा का बड़ा ध्यान रखता है...।'' (सामाजिक विज्ञान, कक्षा 6, पृ. 77)

अनेक बार लगता है कि यह पाठ्यपुस्तकें हिन्दूवादी मानसिकता को पोषित करने का प्रयास भी करती हैं। उदाहरण के लिए, ''राजस्थान के प्रारम्भिक काल से ब्रह्मा और सूर्य की पूजा लोकप्रिय थी। शिव, शक्ति और विष्णु के अवतार के रूप में राम और कृष्ण की पूजा का काफी प्रचलन था। साथ ही गणेश, भैरव, कुबेर, हनुमान, कार्तिकेय, सरस्वती आदि की भी पूजा होती थी।'' (कक्षा 7, पृ. 176), ''भारत में हम इन सात तारों के समूह को सप्तर्षि के नाम से जानते हैं। पौराणिक धारणा यह है कि यह सात बिन्दु ज्ञानी ऋषि हैं जो पृथ्वी को अपने ज्ञान का आलोक प्रदान करते हैं।'' (कक्षा 6, पृ. 1)

जेण्डर संवेदनशीलता की बात करने वाली इन पाठ्यपुस्तकों में ऐसे उदाहरण भी मौजूद हैं जो यह बताते हैं कि इनकी जेण्डर संवेदनशीलता के क्या मायने हैं। पाठ्यपुस्तक में एक घटना दी गई है जिसमें रानी के पिता के दफ्तर से कुछ लोग उनके घर आते हैं। रानी की मम्मी चाय बनाने रसोई में जाती हैं परन्तु गैस खत्म होने के कारण होटल से चाय लानी पड़ती है। इस दौरान मेहमान अकेले बैठे हैं और उन्हें यह बात बुरी लगती है। रानी के दादाजी उपभोक्ता मंच में शिकायत करने को कहते हैं। उपभोक्ता मंच में शिकायत दर्ज होती है और उन्हें जल्द न्याय मिलता है। (कक्षा 7, पृ. 118)। यह महिलाओं को चौके-चूल्हे तक सीमित रहने के साथ-साथ पत्नी को नाम से न पुकारना, निर्णयों में भागीदारी नहीं करने वाली परंपरागत छवि को पुष्ट करती हैं। कक्षा 7 के पाठ 16 में सल्तनतकालीन शासकों की बात करते समय एकमात्र महिला शासक रजिया सुल्तान का जिक्र तक नहीं है। यदि यह जानबूझकर किया गया है, तो इससे पाठ्यपुस्तक निर्माताओं की सोच पर सवाल खड़ा होता है और यदि अनजाने में हुआ है तो उनके इतिहास के ज्ञान पर सवाल खड़ा होता है।

पाठ्यपुस्तक में 'समाज व सरकार' नामक अध्याय में विभिन्न जनजातियों की पंचायतों द्वारा फैसले लेने की प्रक्रिया की सराहना करते हुए कहा गया है, ''प्रारंभिक समाज में इन विविधताओं के कारण कोई अव्यवस्था नहीं फैलती थी। युगों तक बराबरी और मिलजुल कर रहने की परंपरा के कारण समाज अपने साझा मामले आपसी सहयोग से निपटा लिया करते थे। आज भी भील एवं सहरिया जनजातियों में जाजम, चौखला जैसी परंपरागत संस्थाओं द्वारा समानता और भागीदारी के साथ फैसले लेने की परंपरा मौजूद है...इन्हें रीति-रिवाजों की मदद और आपसी समझदारी से सुलझा लिया जाता है।'' (कक्षा 6, पृ. 76) एक तरफ यह अतीतजीविता को बढ़ाती हैं और दूसरी ओर यह इस जगजाहिर तथ्य को छुपाती हैं कि जाति आधारित पंचायतों से किस तरह तुगलकी फरमान जारी किए जाते हैं, जिन पर राजनैतिक पार्टियां तक खामोश हो जाती हैं। पाठ्यपुस्तक में इन परिस्थितियों के विश्लेषण का कोई भी मौका नहीं हैं। अपितु ऐसे अनेक उदाहरण इन पाठ्यपुस्तकों में हैं जो सरकार की प्रशंसा के लिए ही रचे गए लगते हैं जैसे, ''सरकार समाज में होने वाले विवादों का निपटारा कर समाज में रहने वालों के बीच अच्छे संबंध बनाकर रखती है।'' (कक्षा 6, पृ. 76) सरकार की अवधारणा को समझने के लिए क्रिकेट मैच का उदाहरण दिया गया है। इसमें बताया गया है कि सरकार एक अम्पायर की तरह है जो कि तटस्थ होकर निर्णय देती है। यह पाठ्यपुस्तक निर्माताओं की राजनैतिक तौर पर सही रहने की मंशा को ही दर्शाता है क्योंकि कोई भी सरकार न तो तटस्थ होती है और न ही अधिकांश समय बहुत सोच-समझकर निर्णय करती है। यदि ऐसा होता तो फिर संकट ही क्या होता? यदि यह सच है तो उन मामलों को बच्चे कैसे समझेंगे जिनमें न्यायालय को दखल देना पड़ता है? कक्षा 7 की पाठ्यपुस्तक के पृष्ठ संख्या 90 को देखने से आपको पाठ्यपुस्तक लिखने वालों की राज्य एवं सरकार की अवधारणा की समझ पर भी सवाल खड़े होंगे। यदि आप कक्षा कक्षा 6 में 'स्थानीय स्वशासन', 'नगरीय स्वशासन' और 'जिला प्रशासन' या कक्षा 7 में 'राज्य सरकार एवं लोककल्याण' जैसे पाठ देखेंगे तो पाएंगे कि यह पाठ सरकारी योजनाओं के प्रचार कर रहे हैं। क्या इसका अर्थ यह है कि सरकार के द्वारा निर्मित पाठ्यपुस्तकें सरकार अथवा शासन व्यवस्था के प्रति आस्थावान बनाए रखने का औजार बनी रहें?

इसके बजाय पाठ्यपुस्तकों में यह कोशिश हो सकती थी कि बच्चे राजस्थान की पृष्ठभूमि में विभिन्न रीति-रिवाजों, मतों, जीवन शैलियों और सांस्कृतिक परंपराओं को आलोचनात्मक रूप से समझते हुए उनके प्रति सम्मान करना सीखते। परन्तु इन पाठ्यपुस्तकों में ऐसे अवसर हैं ही नहीं जिनमें बच्चा समुदाय से ग्रहण किए गए विचारों, आस-पास की संस्थाओं और अपनी सामुदायिक परंपराओं के संबंध में सवाल और उनकी जांच-पड़ताल कर सके।

सामाजिक विज्ञान के शिक्षण पर निर्मित एनसीईआरटी का फोकस समूह संस्तुति करता है, ''इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र की स्पष्ट प्रणालियां हैं जिनमें अब तक प्रायः सीमाओं को बनाए रखना ही उचित माना जाता रहा है। इन विषय-सीमाओं को खोलने की आवश्यकता है ताकि दी गई परिघटना को समझने के लिए कई तरह के उपागमों का प्रयोग किया जा सके। एक समर्थ पाठ्यचर्या के लिए ऐसी विषय-वस्तु की आवश्यकता है जो अंतर्विषयक विचारधारा को प्रोत्साहित करे।'' एसआईईआरटी के ड्राफ्ट पाठ्यक्रम में यह विचार है। परन्तु पाठ्यपुस्तकें इस मामले में निराश करती हैं। इनमें यह तक जांचने की कोशिश नहीं की गई है कि भूगोल, इतिहास तथा सामाजिक और राजनीतिक जीवन में सिखाई जा रही अवधारणाओं में क्या कोई आपसी रिश्ता है जो बच्चे के सीखने को प्रभावित कर सकता है। पाठ्यपुस्तक में एक गतिविधि दी गई है, ''विश्व मानचित्र में दक्षिण अफ्रीका को देखकर उसके प्रमुख शहरों के नाम लिखिए।'' (कक्षा 6, पृ. 69) जबकि अब तक मानचित्र पर कोई बातचीत नहीं हुई है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिसमें प्राथमिक और उच्च प्राथमिक के मध्य अवधारणाओं, क्षमताओं के बीच कोई रिश्ता नहीं बना है और कक्षा छह में यह अवधारणाएं अमूर्त हो जाती हैं। भूगोल शिक्षण में परंपरागत तरीके को ही दोहराते हुए 'भौतिक भूगोल' पर जोर है और 'मानव भूगोल' हाशिए पर है। इन दोनों हिस्सों में सामंजस्य बच्चों के ज्ञान निर्माण व भूगोल के प्रति रुचि को विकसित कर सकता है।

रंगीन एवं आकर्षक चित्रों के मामले में भी यह पाठ्यपुस्तकें मामूली सा ही आगे बढ़ सकी हैं। शुरुआत आवरण पृष्ठ से हो जाती है जिसमें रंग फैले नजर आते हैं। कागज की चिंताजनक गुणवत्ता और घटिया मुद्रण का सर्वाधिक असर मानचित्रों पर पड़ा है।

यदि पाठ्यपुस्तक विकसित करने वाले समूह को देखें तो बहुतलता उदयपुर के लोगों की है। शायद यह पाठ्यपुस्तक निर्माण को किफायती बनाने के नजरिए से ही किया गया होगा!

मंजिल अभी दूर है

एसआईईआरटी द्वारा विकसित सामाजिक विज्ञान के ड्राफ्ट पाठ्यक्रम तथा नई पाठ्यपुस्तकों के आमुख में समावेशी शिक्षा, अंतरानुशासनात्मक विचारधारा, जेण्डर, भाषा, स्थानीयता जैसे महत्त्वपूर्ण मुद्दों को स्वीकार तो किया गया है परन्तु यह लोकप्रिय नारे की तरह ही साबित हुए हैं। प्रायः पाठ्यपुस्तकें इन द्वंद्वात्मक मुद्दों पर मौन रहती हैं। पुरानी पाठ्यपुस्तकों के अंदाज में भूगोल, सामाजिक-राजनैतिक जीवन व इतिहास को एक ही कवर में रखा गया है, जिनका आपस में कोई संबंध बनाने की कोशिश नहीं की गई है। पाठ्यपुस्तकों में प्रयुक्त अधिकांश अवधारणाएं बच्चों के संज्ञानात्मक स्तर के मुकाबले बहुत जटिल व अमूर्त हैं जिससे बच्चे आलोचनात्मक समझ विकसित करने के बजाय भ्रमित होने व उन्हें रटने की ओर बढ़ेंगे। अवधारणाओं की प्रस्तुति यह सुनिश्चित करती है कि अभी भी बच्चों की शिक्षक पर पूरी तरह से निर्भरता बरकरार रहेगी। ''भारत में पाठ्यपुस्तक का स्थान एक धर्म ग्रंथ के जैसा है और शिक्षकों की भूमिका उस धर्म ग्रंथ को व्याख्यायित करने वाले के रूप में है'' (रोहित धनकर, ''स्कूली किताबें और अंधश्रद्धा'' शिक्षा विमर्श, जनवरी-फरवरी, 2007)। यह पाठ्यपुस्तकें भी अपने-आपको धर्म ग्रंथ के तौर पर ही पेश करती हैं। सामाजिक विज्ञान की एक अर्थवान पाठ्यपुस्तक अपनी पाठ्यसामग्री के चयन एवं प्रस्तुति द्वारा बालकों को समाज की आलोचनात्मक समझ के विकास में महत्त्वपूर्ण साबित हो सकती हैं अर्थात् सामाजिक विज्ञान मानवीय गुणों जैसे स्वतंत्रता, पारस्परिक निर्भरता, विविधता के प्रति सम्मान का भाव एवं संवैधानिक मूल्यों आदि के विकास की दिशा में भूमिका का निर्वहन कर सकता है और एक अनुपयोगी विषय के तमगे से मुक्ति पाने की तरफ बढ़ सकता है। परन्तु यह पाठ्यपुस्तकें एक अर्थवान पाठ्यपुस्तक के रूप में विकसित होने में असफल रही हैं। इसमें न तो स्थानीय मुद्दों को शामिल किया गया है और न ही ज्ञानसृजक बनने के मौके हैं। यह पाठ्यपुस्तकें पुरानी संस्कृति को ही स्थापित करते हुए शिक्षक की परंपरागत भूमिका को बनाए रखती हैं।

यह पाठ्यपुस्तकें अपने निर्धारित उद्देश्यों से अभी भी काफी दूर तो हैं ही, साथ ही परंपरागत विचारधारा को न छोड़ पाने का मोह भी इनमें दिखाई पड़ता है। इन पाठ्यपुस्तकों को देखकर लगता है राजस्थान के बच्चों के लिए सामाजिक विज्ञान की अच्छी पाठ्यपुस्तकों के लिए इंतजार की घड़ियां और अधिक लंबी हो गई हैं। ◆

(इस आलेख में कुलदीप एवं प्रियंका के सुझावों ने बेहतर बनाने में मदद की है)